ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2019; 5(4): 549-553
www.allresearchjournal.com
Received: 14-02-2019
Accepted: 19-03-2019

डॉ0 मंजु चौधरी
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, आर0बी0डी0 महिला महाविद्यालय, बिजनौर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 मंजु चौधरी
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, आर0बी0डी0 महिला महाविद्यालय, बिजनौर, उत्तर प्रदेश, भारत

जनपद बिजनौर में लघु उद्योगों का विकासक्रमः एक अध्ययन

डॉ0 मंजु चौधरी

प्रस्तावना

मानव का जैसे जैसे विकास होता गया उद्यमशीलता भी विकास के साथ उसकी प्रवृत्ति में सहमति होती गयी। उद्यमशीलता के गुण, स्थान परिवेश एवं परिस्थिति के अनुसार विकसित होते हैं। भारत के सन्दर्भ में यह बात अक्षरशः लागू होती है। भारत में ऐतिहासिक साक्ष्यों का अध्ययन करें तो स्पष्ट होता है कि बहुत से क्षेत्र अपनी तकनीकी दक्षता, आर्थिक संगठन एवं औद्योगिक श्रेष्ठता के लिए विश्व विख्यात रहे हैं। भारतीय शिल्पियों की कलात्मक दक्षता विश्व प्रसिद्व थी। विभिन्न प्रकार की कलात्मक वस्तुएं यथा तांबे एवं पीतल की वस्तुएं, हड्डी एवं सींग से निर्मित वस्तुएं, मिट्टी का सामान, पत्थर की तराशी, लकड़ी की नक्काशी, सोने चांदी के आभूषण, जरी का काम, पेंटिग चित्रकला, मलमल एंव कांच का सामान आदि जो भारतीय शिल्पकारों एवं दस्तकारों द्वारा बनाया जाता था, अपनी सुन्दरता के कारण विश्व के बाजारों में अपना स्थान बना चुकी थी। अनेक ग्रन्थों, ऐतिहासिक दस्तावेजों, विदेशी यात्रियों द्वारा वर्णित संस्मरणों में इनके स्पष्ट प्रमाण हैं। ब्रिटिश शासनकाल के पूर्व मध्य युग, जो मुगलों का शासनकाल रहा, में ही भारतीय औद्योगिक संरचना में नगरीय एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास हो चुका था अर्थात उस समय स्थानीय मांग पर आधारित उद्योगों जैसे युद्धकला में प्रयुक्त हथियार, शिल्पी वस्तुएं, सूती कपड़ा, बर्तन, लकड़ी लोहे एवं चमड़े की वस्तुएं, सोने चांदी के आभूषण निर्माण आदि का विकास हो चुका था जिसमें प्रमुखता के साथ स्थानीय रूप से प्राप्त कच्चे माल का प्रयोग किया जाता था। उस समय जो वस्तुएं बनायी जाती थी उनमें परम्परागत तकनीक का प्रयोग किया जाता था।

अध्ययन क्षेत्रः जनपद बिजनौर भौगोलिक दृष्टि से पश्चिमी रूहेलखण्ड का भाग है जो गंगा रामगंगा दोआब में स्थित है। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यह जनपद प्राचीनकाल से ही ख्याति प्राप्त करता रहा है। इसे पांचाल के नाम से भी जानते है। यहाँ मुगल साम्राज्य के समय से लेकर ब्रिटिश शासन काल तक अनेक प्रकार के कुटीर उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में परम्परागत रूप से प्रचलित थे। मुगल काल में यह जनपद विभिन्न राजपूत राजाओं की शरणस्थली रहा। लेकिन मुगलिया सल्तनत को और अधिकार विस्तार देने तथा कुछ राजपूत राजाओं से व्यक्तिगत द्वेष के कारण यहां मुगल शासकों के राजपूत राजाओं से युद्ध हुए। उस समय मुगल सेना ही शस्त्रपूर्ति, उनकी वर्दी व अन्य समानों की पूर्ति हेतु इन कार्यो से सम्बन्धित शिल्पी दस्तकार व कारीगर सेना के साथ, साथ चलते थे तथा मुगल सेना ने इस क्षेत्र से राजपूत राजाओं, गढ़वाल एवं कुमाऊ में ऊँचे दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में खदेड़ दिया तो यह मैदानी उपजाऊ सुरक्षित क्षेत्र मुगलों के अधीन हो गया और रामगंगा के दोआब क्षेत्र में रहकर यह शिल्पी एवं दस्तकार सेना एवं राजाओं की आवश्यकता पूर्ति स्थानीय संसाधनों के आधार पर करने लगे। यहाँ से शुरू हुआ कुटीर एवं हस्तशिल्प व लघु उद्योग का विकासक्रम। ऐतिहासिक तथ्यों से इनके साक्ष्य मिलते है जिनके उदाहरण नगीना व पुरैनी में लकड़ी की नक्काशी, नजीबाबाद में लोहे का सामान, धामपुर में लोहे के बर्तन एवं शस्त्र आदि के रूप में देखने को मिलते है। अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त तक यहां एक संतुलित आर्थिक स्वरूप का गठन हो चुका था, क्योंकि एक ओर तो अच्छी प्रकार से विकसित कृषि व्यवस्था थी तो दूसरी और क्रमबद्ध रूप से हस्तशिल्प उद्योग थे। [1] ग्रामीण क्षेत्रों के अतिरिक्त शहरी क्षेत्रों यथा नजीबाबाद, नगीना, धामपुर, बिजनौर, मण्डावर, नहटौर, कोतवाली आदि क्षेत्रों में उत्पादित हस्तशिल्प वस्तुएं न केवल इस क्षेत्र एवं देश में ही अपितु विदेशों में भी प्रसिद्ध थीं। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्व से पूर्व ही ब्रिटिश शासन ने अपनी जड़े पूरे देश में जमा लीं और यहाँ का शासन ब्रिटिश क्राउन को हस्तान्तरित हो गया। 19वीं शताब्दी के अन्त तक परम्परागत एवं हस्तशिल्प उद्योगों के दृष्टिकोण से न केवल जनपद बिजनौर अपितु सम्पूर्ण रूहेलखण्ड क्षेत्र प्रसिद्ध क्षेत्र बना रहा।

इस समय ब्रिटिश शासन हस्तशिल्प एवं कलात्मक वस्तुओं के प्रशंसक एवं इस कला में प्रश्रदायता के रूप में रहे। परन्तु 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षो आधुनिक संगठित उद्योगों का शुभारम्भ हुआ। विभिन्न प्रकार की भौगोलिक सुविधाओं में वृद्धि के कारण पश्चिमी रूहेलखण्ड के सभी क्षेत्रों में पर्याप्त विकास होने लगा। ब्रिटिश शासक भारत को कच्चे माल के स्रोत एवं उपभोक्ता बाजार के रूप में प्रयोग करने लगे। परिणामः यहाँ मिलों की स्थापना होने लगी जिसका प्रभाव इस क्षेत्र के कारीगरों एवं हस्तशिल्पियों पर पड़ने लगा। यही से शुरू हुआ जनपद बिजनौर में लघु उद्योगों का विकासक्रम। इसलिए इस क्षेत्र को अध्ययन हेतु चुना गया है।

अध्ययन क्षेत्र का विकास स्वरूप : प्रस्तुत आलेख के अंतर्गत जनपद बिजनौर के उद्योगों का स्वंतत्रता से पहले व बाद के औद्योगिक विकासक्रम का अध्ययन किया गया है।

अ– स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व की औद्योगिक दशाएं : स्वतन्त्रता से पूर्व न केवल जनपद बिजनौर में अपितु सम्पूर्ण पश्चिमी रूहेलखण्ड में औद्योगिक विकास की गति मन्द थी तथा औद्योगिक संगठन में परम्परागत हस्तशिल्प व कुटीर उद्योगों की प्रधानता थी सभी प्रकार के उद्योगों के विकास एवं स्थापना का मुख्य आधार कृषिगत कच्चे माल एवं स्थानीय बाजार ही था। यद्यपि 1900 के बाद उद्योगों के स्वरूप, आकार, प्रकार एवं संगठन आदि में पर्याप्त अन्तर आ चुका था। किन्तु फिर भी जनपद बिजनौर में कुछ नगरीय क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्यत्र औद्योगिक परिदृश्य विकसित नही हो पाया था जनपद बिजनौर में स्वंतत्रता प्राप्ति से पूर्व के औद्योगिक स्वरूपों को दो भागों विभाजित कर विश्लेषित किया जा सकता है।

(क) निम्नस्तरीय उद्योग– जनपद बिजनौर में 20वी शताब्दी के आरम्भ तक निम्न उद्योगों की प्रधानता थी अर्थात यहाँ दो प्रकार के उद्योग प्रचलित थे।

प्रथम– ग्रामीण दस्तकारी उद्योग जो कृषि के साथ सामुदायिक सम्बन्धों की व्यवस्था से जुड़ें थे।

द्वितीय– नगरीय हस्तशिल्प उद्योग– जहाँ शिल्पी या तो अपने घरो में वस्तुएं बनाते थे या छोटे–छोटे कारखानों में कार्य करते थे। उस समय लघु उद्योग कारखानों में चलाये जाते थे। ये कारखाने बड़े–बड़े हॉल होते थे जहाँ दस्तकार या शिल्पकार सुबह से शाम तक निरन्तर काम करते थे। कारखानों का संचालन राज्य प्रशासन, व्यापारियों तथा स्वंय हस्तशिल्पियों द्वारा होता था। राज्यों के अधीन कार्य कर रहे कारखानों में श्रमिकों की संख्या अधिक होने के कारण उत्पादन में उपुर्यक्त कारखानों का विशेष एवं प्रभावी योगदान था।2 दस्तकार पीढ़ी दर पीढ़ी अपने पुश्तैनी व्यवसाय में दक्षता प्राप्त करते थे जिसके कारण उच्च कोटि का उत्पादन होता था। किन्तु फिर भी इन उद्योगों में श्रम विभाजन अति निम्न स्तर पर था जिसके कारण उत्पादन क्षमता अपेक्षाक्रम कम थी।

निम्न उद्योगों पर ब्रिटिश उपनिवेशी प्रभुत्व का प्रभाव– भारत के अन्य क्षेत्रों के सामान जनपद बिजनौर में निम्नस्तरीय उद्योगों पर ब्रिटिश उपनिवेशी प्रभुत्व का परस्पर विरोधी प्रभाव पड़ा। विदेशी व्यापार के एकाधिकार, ब्रिटेन में अनेक प्रकार का भारतीय माल के आयात पर प्रतिबंधात्मक प्रशुल्क, विदेशी बाजारों से सम्बन्ध विच्छेद, देशी सामान्तों राजाओं की समाप्ति, भोग विलास की तथा उच्च कोटि की वस्तुओं, सैन्य उपकरणों की मांग में कमी, परिवहन साधनों के विकास के कारण विदेश माल के आयात, आधुनिक कारखानों की स्थापना तथा उपनिवेशी सरकार की उपेक्षापूर्ण नीतियों आदि के कारण दस्तकारी उद्योग को भारी आद्यात पहुंचा। फलतः ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचलित हथकरघा वस्त्र गुड़ एवं शक्कर उद्योग का पतन प्रारम्भ हो गया। विदेशी वस्तुओं के ऊँचे मूल्य, पूँजी निर्माण की न्यूनतम दशाएं, सामान्य नागरिकों विशेषतः ग्रामीणों की न्यूनतम क्रय क्षमता, सरकारी शोषण आदि के कारण आधुनिक वस्तुओं में वृद्धि नही हो पायी। फलतः आम व्यक्ति स्वदेशी एवं परम्परागत तकनीक द्वारा उत्पादित वस्तुओं का ही प्रयोग करता रहा। उत्पादन शक्तियों के विकास की मन्दगति तथा जनसंख्या वृद्धि बेरोजगारी की समस्या को उत्पन्न कर दिया, जिससे न्यूनतम वेतन पर भी अधिकतम श्रम आपूर्ति विधिवत बनी रही। परिणामस्वरूप छोटे उत्पादक व हस्तशिल्पी अपने पुश्तैनी व्यवसाय में ही लगे रहे। अतः इस प्रकार की परिस्थितियों में जनपद बिजनौर में हथकरघा वस्त्र व्यवसाय कृषि उपकरण, चमड़ा जूता उद्योग तथा दैनिक उपभोग की वस्तुओं के निर्माण वाले कुटीर उद्योगो का धीमी गति से विकास होता रहा। इस प्रकार सिक्के के दूसरे पहलू को देखे तो यहां ब्रिटिश उपनिवेशी प्रभुत्व का औद्योगिक विकास पर अनुकूल प्रभाव भी परिलक्षित होता है। यद्यपि पूर्व की तुलना में वस्तुओं का उत्पादन कम हो गया था, साथ ही उनके स्तर में गिरावट भी आने लगी, परन्तु स्वंतन्त्रता प्राप्ति तक निम्न वर्गो के लिए आवश्यक वस्तुओं जैसे मोटा कपड़ा, सस्ता जूता, मिट्टी के बर्तन तथा अन्य सामान की आपूर्ति निम्न स्तरीय उद्योगों द्वारा ही की जाती रही। मशीनों एवं तकनीक विज्ञान पर विदेशी प्रभुत्व, मशीनों के ऊँचे मूल्यों, बैंक से ऋण प्राप्ति का अभाव जोखिम की अधिकता के कारण लघु अद्यमी आंशिक लाभ के लिए निम्न स्तरीय उद्योगों में ही पूंजी लगाने के इच्छुक थे। क्योंकि स्थानीय बाजारों में वस्तुओं की मांग में उतार–चढ़ाव के साथ इस प्रकार के उद्यमी उत्पादन में परिवर्तनशीलता ला सकते थे इस प्रकार के उद्योग कर मुक्त थे। लेकिन श्रमिकों के संगठन का अभाव होने के कारण कारीगरों का शोषण अधिक होता था। विदेशी व स्वदेशी स्पर्धा के कारण ये उद्योग अधिक प्रभावित हुए।

प्रायः ऐसे उद्योगों पर अधिक प्रभाव देखा गया जिनमें उत्पादशीलता बहुत कम थी उत्पादित वस्तुओं का स्तर निम्न कोटि का था। अतः हथकरघा वस्त्र उद्योग शक्कर उद्योग पर व्यापक प्रभाव पड़ा। परन्तु इसके विपरीत जनपद बिजनौर मे प्रचलित यथा–लौहारी, बद्ईगिरी, चमड़ा कमाना, कुम्हारी उद्योग आदि पर आंशिक प्रभाव पड़ा, क्योंकि इस प्रकार के उद्योग एवं दस्तकारी उद्योगों का रूपान्तरण होने लगा। स्थानीय मांग में वृद्धि, परिवहन व्यवस्था में सुधार, बाजार के विस्तार, तकनीक स्तर में उन्नति व वस्तुओं की गुणवत्ता में सुधार आदि के कारण लघु उद्योगों का पुर्नजन्म हुआ। स्थानीय मांग के अनुसार जनपद बिजनौर में कृषि आधारित लघुउद्योग खाण्डसारी, गुड़, चीनी, खाद्यतेल, काँच व सूती वस्त्रों से सम्बन्धित इकाइयाँ स्थापित होने लगी। 1900 से 1950 के मध्य जहाँ एक ओर परम्परागत हस्तशिल्प उद्योगों में अवनति हुई वहीं लघु एवं कुटीर उद्योगों में आंशिक सुधार हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जनपद बिजनौर में परम्परागत उद्योगों का स्वरूप निम्नवत था–

1. **वस्त्र उद्योगः** स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व निम्न उद्योगों में वस्त उद्योग का स्थान जनपद बिजनौर में सर्वोपरि था जिसमें सूती वस्त्र व्यवसाय ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में समान रूप से प्रचलित था। क्षेत्रीय स्तर पर हजारों परिवार इस कार्य में संलग्न थे। जनपद बिजनौर में 1901 में 66 हजार परिवार हथकरघा वस्त्र उद्योग में कार्यरत थे।[3] इस व्यवसाय में कार्य करने वाले करीगरों का 85 प्रतिशत भाग जुलाहा वर्ग से था। जनपद बिजनौर के नगीना, नजीबाबाद, चांदपुर, सहसपुर, धामपुर, नहटौर, गंज उस समय गाठा, गज्जी, गवरून धोती, चादरें व तौलिया निर्माण के लिए जाने जाते थे। चाँदपुर निर्माण के लिए प्रसिद्ध था। इसके अलावा नहटौर, कल्याणपुर वस्त्रों की रंगाई व छपाई के लिए, नगीना पट्टीदार वस्त्रों के लिए, नजीबाबाद कम्बल निर्माण के लिए अपनी पहचान बना चुका था। इस प्रकार इस क्षेत्र में निम्न स्तरीय उद्योगों में निर्मित वस्त्र सुन्दर कोमल व मूल्यवान थे। जनपद बिजनौर में हथकरघा वस्त्रों की गुणवत्ता एवं उत्कृष्टता का अनुमानन 1867 में अफजलगढ़ में निर्मित हथकरघा वस्त्रों को आगरा की प्रदर्शिनी में मिले प्रथम पुरस्कार से लगाया जा सकता है।[4]

2. खाण्डसारी एवं गुड़ उद्योगः अध्ययन क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहाँ कृषकों द्वारा गन्ना को प्राथमिकता के साथ उत्पादित किया जाता रहा है। स्थानीय स्तर पर गन्ना उत्पादन एवं गुड़ की मांग ने 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही इस क्षेत्र को खाण्डसारी एवं गुड़ उद्योग में अति विशिष्ट स्थिाति प्रदान कर दी थी। जनपद बिजनौर गुड़ व शक्कर उत्पादन में उत्तर प्रदेश में गोरखपुर के बाद दूसरे स्थान पर था जहाँ 1908 में 3477 श्रमिक प्रत्यक्षतः इस उद्योग में संलग्न थे।[5] खाण्ड एवं गुड़ प्रक्रिया आसान थी परन्तु उत्पादन की गुणवत्ता कुशलश्रम पर निर्भर करती थी। अधिकांश कृषक अपने द्वारा उत्पादित गन्ने को या तो रसयुक्त रूप में ही अथवा लोहे के कोल्हुओं में पिराई के रूप में खाण्डसारी निर्माताओं को बेच देते थे।

3. पीतल एवं तांबा उद्योगः धातु निर्माण उद्योग में पीतल एवं तांबे के बर्तन का विशेष स्थान है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व पीतल एवं तांबे के बर्तनों का प्रयोग होता था। क्योंकि उस समय एलुमीनियम व स्टील प्रचलन में नही था। जनपद बिजनौर में निर्मित पीतल के बर्तन एशट्रे, प्लेट्स, कटोरियाँ, फूलदान, मोमबती स्टैण्ड, हुक्के, देवी–देवताओं की मूतियाँ आदि कलात्मक वस्तुएं मुरादाबाद के निर्यातकों को बेची जाती थी। और यहां से देश–विदेश को इन वस्तुओं का निर्यात किया जाता था। कारीगरों में मुसलमानों की प्रधानता थी जो इन कार्यो में पूर्ण रूप से निपूर्ण थे। कच्चे माल की आपूर्ति जगादरी व मुरादाबाद मिलों से पीतल की चादरों को आयात करके तथा स्थानीय स्तर पर एकत्रित की गयी कतरनों को गलाकर की जाती थी।[7]

4. लकड़ी की नक्काशी एवं उससे सम्बन्धित उत्पादः आजादी से पूर्व कृषि प्रधान क्षेत्रो में लकड़ी के सामान यथा, हल, बैलगाड़ी, कुदाल, फावड़ा, खुर्पी, दरांत आदि का विशेष स्थान था। इसके अतिरिक्त दरवाजे, चौखट, अलमारी, लकड़ी के सन्दूक, आभूषण, एशट्रे, चकला वेलन आदि का प्रयोग यहां के कुशल कारीगरों के द्वारा किया जाता था। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व नगीना व नजीबाबाद से पंजाब को उच्च कोटि की बैलगाड़िया भेजी जाती थी। नगीना की आबनूस की कंघियों तथा लकड़ी की नक्काशी के लिये देश–विदेश में प्रसिद्ध था। नगीना में निर्मित लकड़ी का सामान ग्लासगो, पेरिस व लन्दन में पसन्द किया जाता था जहाँ नगीना के सामान को पुरस्कार भी मिल चुका था।[8]

5. मिट्टी के बर्तन व अन्य उद्योगः चांदपुर एवं नजीबाबाद मिटटी के बर्तन बनाने के लिए विख्यात रहा है। यहां ग्वालचना मिटटी से निर्मित सुन्दर रंगों से सुसज्जित सुराही, कप, प्लेट देशभर में प्रसिद्ध थे। नजीबाबाद की सुराही ब्रिटिश शासकों द्वारा पसन्द की जाती थी। जनपद बिजनौर में वर्तमान में यह उद्योग जीविकोपार्जन तक सीमित तथा जर्जर अवस्था में है। जनपद बिजनौर में अन्य उद्योग भी अस्तित्व में थे टोपी पर कढाई, कांच के उत्पाद, शीशियाँ, ग्लास, चाकू छुरियाँ, आभूषण निर्माण, रस्सी बान की चटाई की टोकरियाँ आदि। नदियों के खादर क्षेत्रों में रस्सी बान व चटाई निर्माण उद्योग प्रचलित थे। जो ग्रामीणों की आय का स्रोत भी थे और आज भी है।

(ख) संगठित उद्योगः जनपद बिजनौर में संगठित उद्योगों का जन्म व विकास स्वतंत्रता से पूर्व औपनिवेशक काल में हो चुका था। लेकिन विदेशी नीतियों से यह प्रभावित रहा। देश के अन्य क्षेत्रों की भांति जनपद बिजनौर के औद्योगिक विकास पर विदेशी शासकों की नीतियों, विदेशी व स्वदेशी पूंजी के अंशदान उत्पादन की सरंचना तथा मीडियों की दशाओं का व्यापक प्रभाव पड़ा। भारत में उद्योगों को विकसित करने हेतु प्रथम प्रयास ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन काल में किया जा चुका था ताकि अनुकूल व्यापार सन्तुलन कर अधिक लाभ अर्जित किया जा सके। लेकिन अध्ययन क्षेत्र में कम्पनी द्वारा इस प्रकार का कोई प्रयास नही किया गया। इसके लिए जनपद की भौगोलिक स्थिति उत्तरदायी थी। जनपद बिजनौर में नदियों की अधिकता होने व देश की राजधानी से सीधे सड़क मार्ग से उस समय क्षेत्र के जुड़े न होने के कारण औद्योगिक इकाइयों की स्थापना न हो सकी। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात संगठित क्षेत्र के उद्योगों में भारतीय प्रभुत्व बढ़ गया। फलतः 1950 तक लघु व वृहद उद्योगों का चहुँमुखी विकास होने लगा था। जनपद बिजनौर में संगठित क्षेत्र में उद्योगो के विकास को निम्न प्रकार विश्लेषित किया जा सकता है–

1. ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन का समयः कम्पनी का शासन काल का अध्ययन क्षेत्र के विकास पर प्रभाव नगण्य ही रहा है क्योंकि उस समय क्षेत्र में छोटी छोटी रियासतें जैसे–हल्दौर, साहनपुर, ताजपुर, बसेड़ा, जलालाबाद, स्याऊ, मण्डावर व बास्टा आदि अस्तित्व में थी जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मुगल साम्राज्य से जुड़ी थीं। इस समय कुटीर एवं परम्परागत उद्योगों के अतिरिक्त संगठित उद्योगों का पूर्णतः अभाव था।

2. 1900–1920 में मध्य संगठित उद्योगः ब्रिटिश शासन व्यवस्था की स्थापना के कारण क्षेत्रीय स्तर पर परिवहन तंत्र के विकास, कच्चे माल की उपलब्धता, बाजार में वस्तुओं की बढ़ती मांग के कारण पश्चिमी रूहेलखण्ड में 1910 में पूर्व संगठित, उद्योगों को स्थापित करने के प्रयास शुरू हो गए। लेकिन जनपद में इस ओर ठोस प्रयास नही किया गया। 1910 से 1920 के मध्यकाल को संगठित उद्योगों का जन्म कला कहा जा सकता है। इस समय स्वेदशी पूंजी निवेश को प्रोत्साहित करने वाली परिस्थितियों का जन्म, मशीनों के आयात की सुविधा, प्रथम विश्वयुद्ध, विदेशी वस्तुओं के आयात में कमी आदि भौगोलिक दशाओं में क्षेत्रीय स्तर पर संगठित उद्योग के विकास की सभ्भावनाओं को जन्म दिया।

3. 1920–1939 के मध्य औद्योगिक विकासः 1920–1930 के मध्य जनपद बिजनौर में औद्योगिक विकास मन्द रहा क्योंकि इस समय कपास की ओटाई व सम्पीडन से सम्बन्धित इकाईयां बंद होती गयीं। रेलवे वैगन की प्राप्ति में कठिनाई, ब्रिटेन में रूई की मांग में गिरावट, जापान से आयातित वस्त्रों की स्पर्धा के कारण सूती वस्त्र उद्योग पतोन्मुखी हो गया। जनपद बिजनौर में चीनी उद्योग का शुभारम्भ हुआ। इस उद्योग के लिए मजबूत आधार पहले ही स्थापित हो चुके थे क्योंकि प्राचीन समय से ही गन्ने की कृषि का प्रचलन, कुटीर एवं लघु उद्योगों के रूप में गुड़ एवं खाण्ड का निर्माण स्थानीय बाजार की उपलब्धता, सस्ते श्रमिक परिवहन सुविधाएं प्राप्त थीं। 1930–35 के मध्य 6 मिलों की स्थापना हो चुकी थी जिसमें 3 मिलें अपर गैगेज शुगर मिल स्योहरा, धामपुर, नुरपुर मिल धामपुर, एस0बी0 शुगर मिल बिजनौर थीं इनमें 3316 श्रमिक कार्यरत थे। 1920 से पूर्व जहाँ अधिकांश श्रमिक कपास की ओटाई व सम्पीडन एवं हथकरघा वस्त्र उद्योग में लगे थे वही 1930 के बाद यह वर्ग चीनी उद्योग में कार्यरत हो गया।

4. द्वितीय विश्व युद्ध के समय औद्योगिक दशाः द्वितीय विश्व युद्ध का संगठित उद्योग पर व्यापक प्रभाव पड़ा। 1939–45 के मध्य ब्रिटेन के उत्पाद को भारी आघात पहुंचा। अध्ययन क्षेत्र में उस समय कपास की कृषि अधिक होती थी और कपास की ओटाई व सम्पीडन से सम्बन्धित इकाईयां नगीना में कार्यरत थीं। बदलती परिस्थितियों ने किसानों को गन्ना उत्पादन के लिये प्रोत्साहित किया। फलतः चीनी उद्योग दम तोड़ने लगा 1940–45 के मध्य उद्योगों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी।

(स) लघु उद्योगों का स्वरूप : लघु उद्योगों के स्वरूप का सवाल है तो यह स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व बहुत उन्नत नही थे। इस समय

दो आकार वाले उद्योगों की प्रधानता थी। प्रथम–कुटीर व ग्रामोद्योग जिसमें 1–5 व्यक्ति घर में बैठकर परम्परागत तरीके से कार्य सम्पादित करते थे। द्वितीय–वे उद्योग जिनका आकार विशाल एवं पूंजी अधिक लगी थी। इस प्रकार के उद्योग संगठित थे जिन्हें वृहद उद्योगों के नाम से जाना जाता था। इस समय लघु एवं मध्यम आकार वाले उद्योगों का विकास सीमित मात्रा में हो पाया था। 1920 में लघु उद्योगों में कार्यरत श्रमिको के प्रतिशत को देखें तो यह 70.05 प्रतिशत था जो इस बात का प्रदर्शित करता है कि कार्यशील जनसंख्या का बड़ा भाग लघु उद्योगों में कार्यरत था। जैसे–जैसे तकनीकी विकास होता गया श्रमिकों को प्रतिशतता कम होती गयी जबकि लघु औद्योगिक इकाईयों की संख्या में 1930 के बाद वृद्धि हुई। इसका मुख्य कारण कपास ओटाई व सम्पीडन से सम्बन्धित इकाईयों का बन्द होना था।

2. औद्योगिक केन्द्र : स्वतंत्रता से पूर्व संगठित उद्योगों की स्थापना व उनका विकास मुख्यः नगरीय केन्द्रो तक ही सीमित था जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित कुटीर एवं ग्रामोद्योग की प्रधानता थी। 1947 से पूर्व जनपद बिजनौर के धामपुर, स्योहरा, बिजनौर नगरों में ही संगठित औद्योगिक इकाईयां स्थापित हो सकी क्योंकि 18वीं शताब्दी से ही नगरीय क्षेत्रों में कुशल कारीगरों की आपूर्ति, बाजारीय सुविधा, पूंजी संस्थानों की सुविधा, शैक्षिक विकास, परिवहन हेतु पक्की सड़के आदि भौगोलिक सुविधाओं के कारण औद्योगिक इकाईयां स्थापित होने लगी। 1947 से पूर्व जनपद बिजनौर के प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों के रूप में बिजनौर, नजीबाबाद, धामपुर व स्योहरा थे। कुटीर एवं लघु उद्योगों के प्रमुख केन्द्र नगीना, शेरकोट, नहटौर थे जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में तैयार किया हुआ माल शिल्पी व कारीगर लाकर बेचते थे।

3. तकनीकी स्तर : स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व भारतीय उद्योगो में पूंजी की कमी थी तथा अधिकांश उद्योगों की उत्पादन प्रक्रियाओं में श्रम की प्रधानता थी। 1947 तक विनिर्माण में प्रति श्रमिक अचल पूंजी व विद्युत व्यय भी बहुत कम था तकनीकी ज्ञान के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता था। फलतः भारतीय उद्योगों का तकनीकी स्तर बहुत निम्न था। भारत के अधिकांश उद्योग परम्परागत तकनीक पर ही आधारित थे।

4. श्रमिकों की दशाएं : स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व कुटीर उद्योगों की ही प्रधानता थी क्षेत्र में अधिकांश कुटीर उद्योग ग्रामीण अंचलों में दस्तकारों द्वारा चलाए जाते थे जिन्हें दस्तकारी उद्योग के रूप में माना जाता था जो मूलतः कृषि के साथ सामुदायिक सम्बन्धों की व्यवस्था द्वारा जुड़े थे। मशीनों का अभाव एवं तकनीकी स्तर निम्न होने से सभी कुटीर एवं लघु उद्योग मानव श्रम पर ही आधारित थे। ब्रिटिश शासन से पूर्व जब यहां मुगल शासन था तब बुनियादी उद्योगों यथा सेनाओं की आवश्यकता हेतु शस्त्र निर्माण शासकों, हेतु नक्कासी एवं जरदोजी काम आदि की प्रधानता थी जिसमें कारीगर बिना वेतन के कार्य करते थे।

5. औपनिवेशक सरकार की नीतियाँ : किसी भी राष्ट्र में उद्योगों का विकास सरकार की नीतियों पर आधारित होता है अर्थात सरकार की नीतियाँ औद्योगिक विकास के अनुकूल है तो यहाँ की औद्योगीकरण प्रक्रिया का विशेष बल प्राप्त होता है। स्वंतत्रता प्राप्ति से पूर्व भारत लम्बे समय तक औपनिवेशक प्रशासन के प्रभाव में रहा जिसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटेन को आर्थिक एवं राजनीतिक रूप में और अधिक सशक्त बनाना था भले ही भारत में इसका शोषण हो।

(ब) स्वतंत्रता पश्चात की स्थितिः स्वतंत्रता के बाद भारत में विभिन्न अर्थव्यवस्था की नीति को अपनाया गया है जिसे भारत में राजकीय तथा निजी क्षेत्रों का समान्तर अस्तित्व तथा दोनों की अन्तःनिर्भरता माना जाता है। राष्ट्रीय योजना समिति के सुझाव पर अप्रैल 1956 में औद्योगिक नीति का निर्धारण औद्योगिक विकास की महत्वपूर्ण घटना है जिसको समयानुसार संशोधित किया जाता रहा है।

1950 के बाद भारत में औद्योगिक विकास हेतु निम्न विभिन्न नीतियों व कार्यक्रमों को अपनाया जा रहा है–

1. मूलभूत भारी उद्योगों का द्रुतगति से विकास।
2. लघुस्तरीय पूंजीवादी तथा कुटीर उत्पादन को प्रोत्साहित करना।
3. स्थानीय मंडी पर नियंत्रण हेतु राष्ट्रीय उद्योगो का विकास।
4. उद्योगों में प्रयुक्त संसाधनों पर निजी स्वामित्व को सुरक्षित रखने के साथ–साथ राज्यों की अग्रणी भूमिका
5. स्थानीय रूप में उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम किन्तु समुचित उपयोग।
6. बेरोजगारी समस्या पर नियंत्रण
7. हस्तशिल्प एवं दस्तकारी इकाईयों का विकास।

औद्योगीकरण के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु राज्य एवं केन्द्र सरकारें उद्योगों को अनेक प्रकार से प्रोत्साहित कर रही है।

1. लघु एवं कुटीर उद्योगों के स्वरूप में परिवर्तन – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से अन्य आर्थिक क्षेत्रों के समान लघु उद्योगों को भी विकास की नवीन सहयोगी परिस्थितियाँ सुलभ होती रहती हैं। 1950 के बाद से विभिन्न प्रकार के उद्योगों की स्थापना से लघु एवं मध्यम प्रकार के उद्योगों के लिये आवश्यक उपकरण, कच्चा माल आदि सुगमता से प्राप्त होने लगे जिससे लघु उद्योगों के विकास क्रम में वृद्धि हो गयी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद औद्योगिक वस्तुओं की मांग एवं उत्पादन में कई गुना वृद्धि होती गयी। जनपद बिजनौर की औद्योगिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुए यह न केवल औद्योगिक सुविधाओं में सुधार के रूप में हुए अपितु औद्योगिक इकाईयों, श्रमिकों, पूंजीनिवेश तकनीकी स्तर में भी बहुत तेजी से हुए है।

2. लघु एवं परम्परागत उद्योगों की स्थापना में परिवर्तन– पीतल उद्योग में बर्तनों के स्थान पर कलात्मक वस्तुएं, फूलदान, ट्रॉफी, शील्ड, मोमबत्ती स्टैण्ड, देवी–देवताओं की मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। ऐसे ही लुहारी उद्योग में प्राचीन लोहे के बर्तनों के स्थान पर भवनों की ग्रिल, दरवाजें, जाली, फूलदान, स्टैण्ड आदि का निर्माण किया जाता है। वर्तमान में कुछ नवीन उद्योग यथा मोमबत्ती, खाद्यतेल, कोयले के चूर्ण से चिकली बनाना पॉलीथीन बैग, स्टीकर एवं झण्डे बनाना, साबुन प्लाईवुड, चाकू, स्टील फर्नीचर, हल्के कृषियन्त्र, रबड़ की वस्तुएं एवं खिलौने, जूते चप्पल व प्लास्टिक की शीशियाँ व कीरिंग आदि की स्थापना हो चुकी है।

3. उद्योगों की आन्तरिक संरचना में परिवर्तन– जनपद बिजनौर के उद्योग वर्गो व उद्योग की अवस्था में परिवर्तन हुए है क्योंकि कृषि आधारित उद्योगों में निरन्तर विकास होता गया है अर्थात गन्ना कृषि के विकास में चीनी उद्योग को नई ऊँचाईयां प्रदान की है।

4. तकनीकी स्तर में परिवर्तन– तकनीकी स्तर में बड़ा परिवर्तन समय में देखा जा सकता है। 1950 के बाद चीनी एवं खाण्डसारी उद्योग कृषियन्त्र निर्माण रासायनिक पदार्थ व औषधि निर्माण कागज व गत्ता उत्पादन, दाल एवं प्रशोधन उद्योग, लकड़ी व स्टील का फर्नीचर विनिर्माण तथा वस्त्र उद्योग में तकनीकी सुधार के कारण श्रमिकों की उत्पादन क्षमता बढ़ी है।

5. पूंजी निवेश की दशाओं में परिवर्तन– स्वतंत्रता से पूर्व उद्यमिता को सरकारी सहायता एवं अनुदान की कोई विशेष

व्यवस्था नही थी क्षेत्र का धनिक व्यक्ति की पूंजी प्राप्ति का स्रोत था जिसकी ब्याज दर अधिक थी। प्रदेश एवं भारत सरकार की ओर से लघु उद्योग एवं दस्तकारी इकाईयों में पूंजी निवेश को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य वर्तमान में औद्योगिक बैंक सहकारी समितियाँ व निगम कार्यरत हैं जिनसे समय–समय पर उद्यमी लाभ उठाते हैं। भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की स्थापना वर्ष 1990 में लघु उद्योगों के प्रवर्तन, वित्तपोषण एवं विकास तथा इन गतिविधियों में संलग्न संस्थाओं के कार्यो को समन्वित करने के उद्देश्य से प्रमुख संस्था के रूप में की गयी।[9]

6. सरकार की नीतियाँ– स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार की नीति उद्योगों को प्रोत्साहित करने की रही हैं। विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त असमानता तथा आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए नियोजित आर्थिक विकास को महत्ता दी गयी है। छठी योजना में लघु उद्योगों में विकास पर कुल 1780.45 करोड़ रूपयों का प्रावधान किया गया। लघु उद्योगों पर 620.25 करोड़ रूपये व्यय किए गए। 7वीं योजना में लघु उद्योगों के लिए 2752.7 करोड़ रूपये का प्रावधान था लेकिन वास्तविक व्यय 3249.3 करोड़ रूपयों का था। नवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 1082 करोड़ व्यय लघु उद्योगों पर किए गये।[10]

लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए 1971 में केन्द्रीय उपादान योजना बनाई गयी जिसे कुछ संशोधनों के बाद 01.04.1983 को लागू किया गया। इसे अ, ब, स, द श्रेणी में प्रदेश के जनपदों को रखा गया लेकिन जनपद बिजनौर को उपर्युक्त में से किसी भी श्रेणी में नहीं रखा गया। फिर समय–समय पर घोषित अनुदानों का लाभ जनपद बिजनौर को मिलता रहा है। 1991 की औद्योगिक नीति की उदारता की नीति के नाम से जाना जाता है।[11] इस नीति में लघु उद्योगों के लिए कोई प्रावधान नही था फलतः अलग से लघु उद्योगों के लिए नीति घोषित की गयी जिसके निम्न बिन्दु थे।

1. 1. अन्य औद्योगिक उपक्रमों द्वारा लघु के क्षेत्र की इकाइयों में 24 प्रतिशत तक इक्विटी पूंजी की भागीदारी की सके।
2. 2. उद्योगों से सम्बन्धित समस्त सेवा क्षेत्र एवं व्यावसायिक इकाइयों को अब लघु क्षेत्र में सम्मिलित किया जाएगा।
3. 3. लघु उद्योग क्षेत्र के निर्यातों को समर्थन देने के लिए लघु उद्योग विकास संगठन को प्रमुख संस्था के रूप में मान्यता दी जाए।

निष्कर्ष एवं सुझाव : आर्थिक सुधार लागू होने के बाद 1991 से अर्थव्यवस्था के द्वारा धीरे–धीरे निवेशकों हेतु खोले जा रहे है उसे किसी सीमा तक विश्व अर्थव्यवस्था के साथ मिलाया जाता है। अब जोर इस बात का दिया जा रहा है कि औद्योगिक ढांचे की गुणवत्ता में सुधार किया जाए ताकि उनके उत्पाद अन्तर्राष्ट्रीय मीडियों में प्रतियोगिता का सामना कर सकें। वास्तव में लघु उद्योग के विकास दर समग्र औद्योगिक क्षेत्र से दो या तीन प्रतिशत अधिक रही हो लघु उद्योग क्षेत्र विकास हेतु सरकार द्वारा प्रयास किये जा रहे है उनमें सम्मिलित है बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था, कुछ वस्तुओं का निर्माण लघु उद्योग क्षेत्र हेतु आरक्षित करना ऋण लेने के लिये लघु उद्योगों का प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में सम्मिलित करना उत्पादन शुल्क में रियासत कच्चे माल की व्यवस्था बिक्री में सहायता प्रौद्योगिकी स्तर सुधारने में सहायता आदि।

स्वतंत्रता के पश्चात केन्द्र एवं राज्य सरकार की नीतियों एवं योजनाओं के प्रोत्साहन के कारण क्षेत्रीय स्तर पर औद्योगीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा मिला है। जिसमें राजकीय उधमवृति ने और अधिक सहयोग प्रदान किया है। लघु उद्योगों में छोटी एवं कम विद्युत शक्ति का प्रयोग करके भी श्रमिक अपनी कला एवं प्रतिभा का प्रदर्शन कर सकता है जो क्षेत्र विकास में बहुमूल्य योगदान प्रदान करेगा। सर अल्फ्रैड की 1933 में की गई चिन्ता के क्रियान्वयन का यही सही समय है।[12] जब पुनः प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक संसाधनों की श्रुति स्थापित करें जैसे कि अतीत में जिसके बल पर भारत सोने की चिड़िया बना था। वर्तमान में अपनी मेघा को समझकर उसी के अनुरूप उद्योगों को स्थापित करके अपनी खोई हुई समृद्धि को प्राप्त करने हेतु प्रधानमंत्री ने देश के युवाओं के लिये स्टार्टअप का नारा दिया है। ऐसे देश के युवाओं को अनेक योजनाओं का लाभ उठाकर न केवल स्वंय को स्थापित कर सकते हैं अपितु अपने क्षेत्र को भी एक वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में खड़ा कर सकते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में जनपद बिजनौर के लघु उद्योगों के विकास क्रम का अध्ययन करने पर पाया गया कि स्वतंत्रता के पश्चात जनपद बिजनौर के लघु उद्योगों की श्रेणी में अपना प्रभुत्व स्थापित कर रहा है, जिससे जनपद बिजनौर उद्योगों के रूप में अपनी अलग ही पहचान बना रहा है।

सन्दर्भ

1. Ahamad Manfooz, 'Historical Analysis of Small Scale Industries, 1958.
2. ibid p.1
3. बिजनौर गजेटियर, वाल्यूम XIV-1191 पृ. 65
4. उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, रामपुर 1974 पृ. 134
5. बिजनौर गजेटियर, वाल्यूम XIV-1911 पृ. 96
6. Chatterge A.C. Notes on the Industries of United Provinces' Allahabad, 1908 p. 91
7. ibid p.117
8. ibid p.142
9. त्रिपाठी विभा (संपा.), 'उद्यमी उद्यमी उद्यमिता', उद्यमिता विकास संस्थान, उत्तर प्रदेश, लखनऊ 2001–02 पृ. 31
10. कुरूक्षेत्र हिन्दी मासिक पत्रिका–जनवरी 2005 पृ. 26
11. Report of SIDC, 'The Securities Industry Development Corporation. 1980;81(5):689.
12. शर्मा पवन कुमार, 'लघु उद्योगों में अग्रणी था भारत', योजना हिन्दी मासिक पत्रिका, नवम्बर 2017 पृ. 49